प्राकृतभाषा का व्याकरणपरिवार

भाषा परिज्ञान के लिए व्याकरण ज्ञान की अत्यंत आवश्यकता है। प्राकृत में छन्द, ज्योतिष, व्रत-परीक्षा, धातु-परीक्षा, भूमि-परीक्षा, रत्न-परीक्षा, नाटक, काव्य, महाकाव्य, स्त्री आदि विभिन्न रचनाओं में होती रही हैं। जब किसी भी भाषा के बाद में की विभाजन राशि संबंध हो जाती है तो उसकी विभिन्न व्यस्त के लिए व्याकरण अनुठ सूची जाता है।

प्राकृत जनभाषा होने से प्रारम्भ में इसका कोई व्याकरण नहीं लिखा गया। बौद्ध भाषा के आनुवांशिक सम्बन्धी जितने व्याकरण अनुपलब्ध हैं, वे सभी संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं, प्राकृत में नहीं। कुछ विद्वानों का कहना है कि—प्राकृत भाषा का व्याकरण प्राकृत में लिखा हुआ अवधार था, परन्तु आज वह अनुपलब्ध है। अत: आज प्राकृत भाषा का व्याकरण-परिवार जो उपलब्ध है, उस पर हम योग्य विचार करेंगे।

विद्वानों ने प्राकृत व्याकरण की दो शाखायें मानी हैं। एक पश्चिमी और दूसरी पूर्वी। प्रथम शाखा का वास्तवीकरण और द्वितीय का वर्णुचि की गरमावर दोस्त है।

पश्चिमी परम्परा का प्रतिनिधित्व विक्रम (ई० १३००) कृत प्राकृत व्याकरण है। कहा जाता है कि—इसे महाकवि वाचार्य ने रचा था, परन्तु इस वात का कोई प्रामाणिक आधार नहीं है। लक्ष्मीवर की छिड़माया-चन्द्रका" तथा सिद्धराज का प्राकृत-संस्कृत का वर्णुचि भी इसी शाखा में अंतर्भूत होते हैं। पूर्वी शाखा का प्रथम व्याकरण वर्णुचि कृत 'प्राकृत-प्रकाश' है।

(१) प्राकृत-प्रकाश—यह व्याकरण की वर्णुचि ने रचा है। नववर्ष वर्णुचि का प्राकृत व्याकरण कहा जाता है। कुछ विद्वान चण्ड के प्राकृत-लक्षण को प्रथम मानते हैं और उसका अनुक्रम वर्णुचि ने किया है, ऐसा कहते हैं। वर्णुचि का गोवित कायायन कहा गया है। दो० पिशाल ने अनुसार किया था कि प्रसिद्ध वातिलकार कायायन और वर्णुचि दोनों एक ही व्यक्ति है, किन्तु इस कथन की पुष्टि के लिए, एक भी सब्ज्ञ प्रमाण मिलता नहीं है।

एक वर्णुचि कालिवास के समकालीन भी माने जाते हैं जो विक्रमासिद्ध के नववर्षों में से एक बो—
“रत्नां वे वर्णुचिनविविकलय”।
प्राकृत भाषा का व्याकरणपरिवार ४७

इस प्रकार वर्णित के बारे में सिविल-पिशाच सामग्रियाँ हैं।
प्राकृत-प्रकाश में कुल ५०६ सूत्र हैं। भाषा-बुद्धि के अनुसार ३८७ और चन्द्रिकातंत्र के अनुसार ११७ सूत्र उपलब्ध हैं। प्राकृत-प्रकाश की चार प्राचीन शाखाएँ भी प्राप्त हैं—

(१) मनोरमा—यह टीका के रचितार्थ भाषा है। इसका ग्रंथ सातसी-आठवी संस्करण है।
(२) प्राकृतवंजनी—यह टीका के रचितार्थ काल्याणनाम के विख्यात है। इसका कार चौथी-सातवी रोशनी है।
(३) प्राकृतसंस्कृती—यह टीका वसन्तराज ने लिखी है। इसका कार १५-१५ वर्षावर्षी है।
(४) सुबोधि—यह टीका सदास्य ने लिखी है।

नवम परिच्छेद के नवम सूत्र की समाधि के साथ समाप्त हुई है।

नारायण विधानविनोद-कूण ‘प्राकृतवाद’ इत्यादि टीकाएँ हैं। कदः तथा उसास्तिश्राव से रचित तथा मलावर निवासी रामसांगिवाद ने भी इस पर टीका लिखी है। इस टीका में गणी सत्संगी, कश्यप-मंजरी, सेतुरथ और विष्णुगोहो आदि से उद्दर्पन प्रस्तुत किये गये हैं।

प्राकृत-प्रकाश में वारद परिच्छेद हैं।

प्रथम परिच्छेद में स्वर-विकार और स्वर-परिवर्तन के नियमों का निर्धारण किया गया है। विशिष्ट-विशिष्ट शब्दों में स्वर-संयोग जो विकार उत्पन्न होते हैं, उनका ४४ सूत्रों में विवेचन किया है।

दूसरे परिच्छेद में ४५ सूत्र हैं। इसका आरम्भ मध्यवर्ती व्यजनों के लोप से होता है। मध्य में आने वाले क, य, च, ज, त, द, प, ब और व के लोप का विधान है। दूसरे सूत्र के विशेष-विशेष साधनों के असंयुक्त व्यजनों के लोप के साथ उनके स्थान पर विशेष व्यजनों के आदेश का निर्देशन किया गया है।

तीसरे परिच्छेद में ५५ सूत्र हैं। इसमें संयुक्त व्यजनों के लोप, विकार एवं परिवर्तनों का निर्देशन है। सभी सूत्र विशिष्ट-विशिष्ट शब्दों में संयुक्त व्यजनों के परिवर्तन का निर्देशन करते हैं।

बीते परिच्छेद में ३३ सूत्र हैं। इसमें संततिविधि-निर्धारण शब्दों के अनुशासन वर्णित हैं। इस परिच्छेद में अनुकूल, विकारी और देश इन तीनों प्रकार के शब्दों का अनुशासन आया है।

पूर्वी परिच्छेद में ४५ सूत्र हैं। इसमें लिख और विभक्त का आदेश वर्णित है।

छठे परिच्छेद में ६५ सूत्र हैं। इसमें विधि विधि का निर्धारण है। यानी सर्वनाम शब्दों के रूप एवं उनके विभक्त, प्रत्यय विनिर्दिष्ट किये गये हैं।

सातवें परिच्छेद में ३४ सूत्र हैं। इसमें तिन्कु विधि है। धातुप्रेषों का अनुशासन संक्षेप में निल्ला गया है।

अष्टम परिच्छेद में ५५ सूत्र हैं। इसमें धातुवादेः है। संस्कृत की किस धातु के स्थान पर प्राकृत ।
प्राकृत भाषा और साहित्य

में कौन-सी धारा का आदेश होता है, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। यह प्रकरण बहुत ही महत्वपूर्ण है।

नवम परिच्छेद में १५ सूत्र हैं। यह परिच्छेद निपात का है। इसमें अध्ययन के अर्थ और प्रयोग द्वारा गये हैं।

दसवें परिच्छेद में १४ सूत्र हैं। इसमें पौराणिक भाषा का अनुवाद है।

स्वारूपमें परिच्छेद में १५ सूत्र हैं। इसमें मानवी प्राकृत का अनुवाद है।

बारहवें परिच्छेद में १२ सूत्र हैं। इसमें शौरसनी भाषा के नियम द्वारा है।

प्रारम्भ के ६ परिच्छेद महाराष्ट्री के हैं, १०वां पौराणिक का है, ११वां मानवी का और १२वां शौरसनी का है।

कुछ इतिहासकारों का मत है कि—अन्ततः तीन परिच्छेद मानवी अथवा किसी अन्य ठीकारे ने लिखे हैं। प्राकृत ज्ञातव्यों और प्राकृतमंजरी में केवल महाराष्ट्री का ही वर्णन है। समस्या है कि ये तीन परिच्छेद हेमचन्द्र के पूर्व ही सम्बन्धित कर लिए गये होंगे।

वर्तमान का प्राकृतप्रकाश भाषाकार की हिंदी से बहुत ही महत्वपूर्ण है। संस्कृत भाषा की ध्वनियों में किन प्रकार के ध्वनि-परिवर्तन होने से प्राकृत भाषा के शब्द रूप बनते हैं, इस विषय पर इसमें विस्तृत प्रकाश दाला गया है। प्राकृत अवयव के लिए यह प्रथा अत्यन्त उपयोगी है।

वर्तमान का समय लगभग छठी शताब्दी माना जाता है। चण्डा का समय तीसरी, चौथी शताब्दी माना जाता है। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान के प्राकृतप्रकाश के पूर्व चण्डा का प्राकृतप्रकाश होगा।

(२) प्राकृतलक्षण—यह रचना चण्डा कुछ है। कुछ विवाह वर्तमान के प्राकृतप्रकाश को प्रथम मानते हैं और कुछ विवाह चण्डा के प्राकृतलक्षण को प्रथम मानते हैं। परस्तु तौर पर यह सम्भव है कि यहों प्रथम होगा। डो० लिलात जैसे अनेक विवाह प्राकृतलक्षण को पारंपरिकत मानते हैं। परस्तु आजकल यह प्रथम उपलब्ध होने से निष्ठभुक कुछ नहीं कह सकते।

प्राकृतलक्षण यह संभव होता है। इसमें सामाजिक प्राकृत का जो अनुवाद है, वह प्राकृत अभिव्यक्ति की ध्यान रखते हैं। इसमें प्राकृतिक भाषा प्रतीत होती है। वर्तमान के प्राकृतप्रकाश का प्राकृत उसके पाशातूं की प्रतीत होती है।

बीर भक्तवान को नमस्कार करके चण्डा ने इस व्यक्तिरिति की रचना की है। इस व्यक्तिरिति के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि—उस समय प्राकृत में आज की भाषा अनेक भेद नहीं थे।

डो० हरमले ने हूं १८५० १८५० में कलकत्ता में कलकत्ता से अनेक प्राचीन प्रतियों की तुलना करके इसकी प्रतीत चीज़ इस। उससे अनेक बातें की जानकारी प्राप्त की होती है, परस्तु आज वह भी अनुपलब्ध है।

इस व्यक्तिरिति में चण्डा ने बताया है कि मध्यवर्ती अल्पवर्ति प्रयोगों का लोप नहीं होता है, बे वर्तमान रहते हैं।

इस प्रथम में कुल ६६ या १०२ सूत्र हैं। बे चार पाठों में विभक्त है। आरम्भ में प्राकृत शब्दों के
प्राकृत भाषा का व्याकरण परिवार

1. तीन रूप—सत्वाव, तस्ताव और देवज बतलाये हैं। तीनों लिंग और विभक्तियों का विधान संस्कृत के समान ही पाया जाता है।

प्रथम पाद के ५वें सूत्र से अन्तिम ३५वें सूत्र तक संज्ञाओं और सर्वनामों के विभक्ति रूपों का निरूपण किया है।

द्वितीय पाद के २६ सूत्रों में स्वर-परिवर्तन, शब्दावलियों और अध्ययन का कार्य किया गया है।

तृतीय पाद के ३५ सूत्रों में व्यंजन-परिवर्तन के नियम दिए गये हैं।

चतुर्थ पाद में केवल चार सूत्र ही हैं। इनमें अपभ्रंश का लक्षण, अपरेक्ष का लोप न होना, पैशाची की प्रत्युत्कार, मणिक्षी की प्रवृत्तियाँ, रूप और सु के स्थान पर लू और गु का बदलाव, शौरसेनी में त के स्थान पर विकल्प के द का बदलाव किया गया है।

(३) प्राकृतव्याकरण—“सिद्धेश्वराचार्यसासन” नाम का आचार्य श्री हेमचन्द्र रचित व्याकरण है। यह व्याकरण सिद्धार्थ को अपित किया है और हेमचन्द्र द्वारा रचित है, इसलिए इसे “सिद्धेश्वर व्याकरण” नाम दिया गया है।

इस व्याकरण में सात अध्ययन संस्कृत शब्दावलियों पर और आठ अध्ययन में प्राकृत भाषा का अनुसंधान लिखा गया है। आचार्य हेमचन्द्र का यह प्राकृत व्याकरण उपलब्ध समस्त प्राकृत व्याकरणों में सबसे अधिक परिक्षण, सुसंवर्तित और परिपुर्ण है।

सिद्धेश्वरव्याकरण का समय १०५५-११७२ ईसवी का माना जाता है। इसका समाप्त १६२० में पिता एल० बेल ने किया है। उसके अनेक विद्वानों ने भी इसका समापन किया है।

इस व्याकरण में प्राकृत की छ: उप-भाषाओं पर विचार किया है—(१) महाराजपूर्वी, (२) गोर-सेनी, (३) मागधी, (४) पैशाची, (५) चुलिका, पैशाची और (६) अपभ्रंश। अपभ्रंश भाषा का नियम ११६ सूत्रों में स्वतंत्र रूप से किया है।

पश्चिमी प्रदेश के प्राकृत के विद्वानों में आचार्य हेमचन्द्र का नाम सबसे प्रमुख है। जिस प्रकार वर्तमान के व्याकरण के मान्य प्रमाण महाराजपूर्वी मानी जाती है, उसी प्रकार जैन आध्यात्मिक के प्रमाण हेमचन्द्र का प्राकृत को जैन महाराजपूर्वी प्राकृत कहा जाता है।

हेमचन्द्र ने स्वयं ही बहुत और लघु वृत्तियों में अपने व्याकरण की टीका प्रस्तुत की है। लघु-वृत्ति “प्रवाहिक” के नाम से मिलती है। उद्यमोपाय सचित्रृ द्वारा “प्रकाशिका” पर की गई एक टीका “हेमप्राकृतवृत्ति पुण्यिक” अथवा “प्रवत्तिवाद” नाम से मिलती है। जिसे कुछ विद्वान् “प्राकृत प्रक्रिया वृति” कहते हैं। हेमचन्द्र के आठवें परिणाम पर सर्वेक्षण-से रचित “प्राकृत प्रबोध टीका” उपलब्ध होती है।

इस व्याकरण में कहीं-कहीं काश्यप, केचित, आदि इत्यादि प्रयोग से मालूम पड़ता है कि—हेमचन्द्र ने अपने से पूर्व के व्याकरणार्थी से भी सामग्री ली होगी।

हेमचन्द्र को चौथी मात्रा और वर्तमान से व्याख्या परिवर्तित है। हेमचन्द्र ने प्राचीन पर्वंस्त्र को स्वीकार करके नये अनुसंधान उपलब्ध किये हैं।
५० प्राकृत भाषा और साहित्य

इस व्याकरण में चार पाठ हैं। प्रथम पाठ में २७१ सूत्र हैं। इसमें सन्धि, व्यज्ञानात्मक शब्द, अनुशार, लिंग, विसर्ग, स्वर-व्यत्यय और व्यज्ञ-व्यत्यय का विवेचन किया गया है।

द्वितीय पाठ के २१६ सूत्र हैं। इसमें संयुक्त व्यज्ञों के परिवर्तन, समीकरण, स्वरमूल्य, वर्ण-विपयय, शब्दविभाजन, तत्त्व-विन्यास और अन्य शब्दों का विवेचन किया गया है।

तृतीय पाठ में १५२ सूत्र है। इसमें कारक, विनिर्मित्तों तथा किया रचना सम्बन्धी नियमों का विवेचन किया गया है।

चतुर्थ पाठ में ४४३ सूत्र हैं। आरम्भ के २४६ सूत्रों में धातुविभाजन और आगे क्रमानुसार और दृष्टिगत अर्थसूचना का विवेचन किया गया है।

आचार्य श्री हेमचंद्र के मत से प्राकृत शब्द तीन प्रकार के हैं—तत्सम, तद्वर्त और देशज; इसमें से तद्वर्त शब्दों का अध्ययन इस व्याकरण में किया गया है।

आचार्य हेमचंद्र ने “आर्यम्” c/1/3 सूत्र में आर्य प्राकृत का नामोलेख किया है और बताया है कि—“आर्य प्राकृत वहूँ स्त्रीलिंग, तदपि यथायथां दर्शियादयां। आर्य हि सर्व विश्वयो विकल्पयते” अर्थात् अधिक प्राचीन प्राकृत आर्य-आधिपत्य प्राकृत है। इसमें प्राकृत के नियम विकल्प से प्रवृत्त होते हैं। हेमचंद्र ने विविध-विविधात्म में बड़ी पद्धति कराई है।

आचार्य हेमचंद्र ने संस्कृत शब्दों के प्राकृत में जो आदेश किये हैं, वे भाषाविज्ञान से नवीन नहीं खाते। उदाहरण स्वरूप “पम्म” धातु का त्रिभुज वा “भम्म” नहीं बन सकता। हेमचंद्र ने केवल अर्थ का ध्यान रखा है। भाषाविज्ञान की ही उद्देश्य से अध्ययन करने के लिए उचित होगा कि मूल धातुओं की खोज की जाय। परिणाम के धातु पाठ में “हिन्दूलिङ्ग” स्वरता धातु है। जिसके रूप में “हिन्दूलिङ्ग” इत्यादि बनते हैं। इसी प्रकार “भम्म” धातु भी अद्वित है। यदि इस प्रकार भी सहस्य धातुओं का ध्यान रखा जाय तो अद्वित्य अवधिक बिभाजित हो सकेगा।

(४) संक्षिप्तसार—श्री कमदेश्वर का यह व्याकरण संस्कृत, प्राकृत इन दोनों भाषा पर लिखा है और सिद्धांत व्याकरण की तदर्थ हमें भी ८० अध्याय में प्राकृत व्याकरण का विवरण किया है। उसे “प्राकृतपाद” की संज्ञा दी है।

इस प्रथम में प्राकृत के व्याकरण के छह विभाग किये हैं—

(१) स्वरकार, (२) ह्लुकार, (३) गृहाकार, (४) तिल्कृताकार, (५) अरङ्गकार और (६) चन्द्र कार।

कमदेश्वर ने अपने संक्षिप्तसार व्याकरण पर एक छोटी-सी टिका भी लिखी है। इस पर और तीन टिका है, जो प्रकाशित नहीं हुई है—

(१) जुम्मलविन्यास की रस्मविन्यास,
(२) चण्डीदेव शर्मा की प्राकृतविन्यास,
(३) विश्वासिनोदयाचार्य की प्राकृतपाद टिका।
प्राकृत माया का याकरण परिवार ५६

कमधीश्वर ने वर्षधि का ही अनुकरण किया है। इसका काल हेमचन्द्र और बोधिदेव के बीच १२वीं-१३वीं शताब्दी है।

(५) प्राकृतयाकरण—यह याकरण त्रिविरकमदेव ने रचा है। जिस प्रकार आचार्य हेमचन्द्र ने सरवांड-पूण याकरण लिखा है, उसी प्रकार त्रिविरकमदेव का यह सरवांड-पूण याकरण है। इसकी स्थिरवृत्ति और सूत्र बोधि हैं। इस याकरण में तीन अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में ४-५ पाठ हैं। इस प्रकार कुल १२ पाठों में यह याकरण पूण हुआ है। इसमें कुल १०३६ सूत्र हैं।

श्री त्रिविरकमदेव ने हेमचन्द्र के सूत्रों में ही कुछ फेरफार करके अपने सूत्रों की रचना की है। विश्वानुक्रम हेमचन्द्र का ही है। इस याकरण में देशी शब्दों के वर्गीकरण से हेमचन्द्र की अपेक्षा नवीनता दिखती है। व्याख्या अपरिणेय के उदाहरण हेमचन्द्र के ही हैं, परन्तु संस्कृत छाया देखकर इस्तेमाल अप्रर्श के वोड़ों को समझाने का प्रयास किया है।

श्री त्रिविरकमदेव ने अनेकाध्यक्ष शब्द भी दिये हैं। इन शब्दों के देखने से तत्कालीन मायाओं का ज्ञान ही होता ही है, पर साथ-साथ अनेक सांस्कृतिक बातों की भी जानकारी मिलती है। इस प्रकार हेमचन्द्राचार्य के याकरण का अर्थ इस याकरण में अनेक विशेषताएँ हैं।

इसमें शोरोत्तर, मामधी, पैलोशी, चूलिका-पैलोशी इत्यादि मायाओं के निर्माण भी मिलते हैं।

इसमें श्री त्रिविरकमदेव ने मंगलाचारण में बीर मंगल को नमस्कार किया है। ऐतिहासिक विद्वान त्रिविरकमदेव को विश्वसनीय है।

इसके याकरण के समय में दो मत प्रचलित थे। कुछ तो कहते हैं कि सूत्र और वृत्ती दोनों ही त्रिविरकमदेव के हैं, कुछ विद्वान सूत्रों को वाल्मीकिकृत और वृत्ती त्रिविरकमदेव मानते हैं।

सूत्रों की रचना पाणिनी ने अतत्माचार्य की कालिका वृत्ती के अनुसार हुई है। इसका समय १२—१४ शताब्दी के बीच का है, क्योंकि हेमचन्द्र के प्रथम का त्रिविरकमदेव ने अपने प्रथम में उल्लेख किया है और त्रिविरकमदेव के प्रथम का कुमारस्वामी (सोलहवीं शताब्दी) ने अपने प्रथम रत्नाला में उल्लेख किया है। इन प्रमाणों से त्रिविरक का समय हेमचन्द्र और कुमारस्वामी के बीच का ही सम्भव है। परंतु मायाकरण के प्राकृत वैयाकरणों में त्रिविरक प्रमुख हैं।

(६) प्राकृतकृताचार——श्री सिद्धराज कृत प्राकृतकृताचार त्रिविरकमदेव के सूत्रों को ही लघु- सिद्धान्त-कोूमुदी का पद्धति के रूप में लिखा है।

इसमें संक्षेप में सत्य, शब्दरूप, धार्मिक, समास, संज्ञा आदि का विचार किया है। इसमें छह माण हैं। शोरोत्तर, मामधी, पैलोशी, चूलिका-पैलोशी और अपराध इन मायाओं का विवेचन है। संज्ञा और किया पद के ज्ञान के लिए यह याकरण बहुत ही उपयोगी है। सिद्धराज की तूलना वर्षाचार्य के साथ कर तकते हैं।

सिद्धराज को कुछ विद्वान सिद्धराज भी कहते हैं। सिद्धराज ने लक्ष्मीदेव की माति ही सूत्रों पर
५२ प्राकृत भाषा और साहित्य

वृत्त की रचना की है। इस वृत्त का ही नाम प्राकृतकाव्यातार रचा है। इसमें सूचना का नम पह-भाषा-विष्कार के सामान ही रखा गया है।

इस प्रकार सन १६०६ में ई. ३० हिस्से (E-Hultzsca) ने प्रमाणार्थिक सौंदर्यी कलकत्ता की तरफ से प्रकाशित किया था। इसका काल १३००-१४०० से २० माना जाता है। तुलना की ही हाल से इसके प्रत्येक सूत्र के सामाने आचार्य हेमचन्द्र के सूत्र में छोड़ दिये गये हैं। युक्तिद्वारा अर्थ शब्दों के रूप दूसरे व्याकरणों की अपेक्षा से इसमें अधिक विस्तृत हैं। कहीं-कहीं रूपों में व्याख्या भी स्पष्ट दिखाई है। इस व्याकरण का प्रयोग करते समय सिद्धार्थ ने इस व्याकरण का विशेष ध्यान रखा है कि कोई भी आचार्यक नियम छूट न जाये। इसलिए उन्होंने आचार्यक सूत्रों को ही लिया है, शेष कुछ सूत्रों को छोड़ दिया है।

(६) प्राकृतकवित्त—श्री रामदास तर्कवाची ने प्राकृतकवित्त की रचना पुस्तकात के प्राकृतनुसार के अनुसार की है। ये बंजार के निम्नांशी थे। इसका समय ईसा की १७वीं शताब्दी माना जाता है। प्राकृतकवित्त पर स्वयं लेखक की एक स्वतंत्र टिका भी है।

इस व्याकरण में तीन शाखाएँ हैं। पहली शाखा में दस तत्व हैं। जिनमें महाराष्ट्री के नियमों का विवेचन है।

दूसरी शाखा में तीन तत्व हैं—जिनमें सौरसेती, प्राच्या, अवस्था, वैधाकी, मायाधि, अर्थमामधि और दांतिक तथा का विवेचन है। विधापाथों में शाकारी, चांदाक्षया, शाबरी, अमारी और तककी का विवेचन है।

तीसरी शाखा में नागर, अपवांश, ब्राह्मण तथा पैशाचिक का विवेचन है। कौक्र, सौरसेती, पांचाल, गोइ, मायाधि और ब्राह्मण पैशाचिक भी इसमें वर्णन है।

(७) प्राकृतसर्वभेद—श्री मार्कन्देय कविन्द्र का 'प्राकृत सर्वभेद' एक महत्वपूर्ण व्याकरण है।

इसका रचनाकाल १५वीं शताब्दी है। मार्कन्देय ने प्राकृत भाषा के माध्यम, विभाषा, अपवांश और पैशाचिक वे चार में मिलकर रचित है।

भाषा के महाराष्ट्री, सौरसेती, प्राच्या, अवस्था और मायाधि में है। विधापाथों में शाकारी, चांदाक्षया, शाबरी, अमारी और तककी यह प्रक्षेत्र है। अपवांश के नागर, ब्राह्मण और उपनागर तथा पैशाचिक के कौक्र, सौरसेती और पांचाल इत्यादि में वर्णन है।

मार्कन्देय ने आरम्भ के बाद पादों में महाराष्ट्री प्राकृत के नियम में बलाये। इन नियमों का आधार प्रायः वर्णचित्र का प्राकृतकवित्त है। १६वें पाद में सौरसेती के नियम दिये गये हैं। १०वें पाद में प्राच्या भाषा का नियमन किया गया है। ११वें पाद में अवस्था और ब्राह्मण का वर्णन है। १२वें पाद में मायाधि के नियम में बलाये गये हैं। इसमें अर्थमामधि का भी उल्लेख है।

आचार्य श्री हेमचन्द्र ने इस प्रकार पश्चिमी प्राकृत मानवी भाषा का अनुसार रचा है, उस प्रकार श्री मार्कन्देय ने पूर्वी प्राकृत का नियमन किया है।

मार्कन्देय ने अपने व्याकरण की रचना आर्य-छंद में की है। उस पर उनकी स्वतंत्र टिका है।
प्राकृत माया का व्याकरण परिचार ५३

श्री मार्क़ज़ेय कविन्द्र ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही वर्षमच, शाकल्य, भरत, कोहूल, मागन और
वसंतराज द्वारा तथ्यादि का नामोलेख किया है। माया के १६ में बताया हैं। माया, विमाया के अनेक के
द्वारा यह व्याकरण का उपयोग किया है।

(६) पढ़माल्टाचिन्द्राकान——श्री लक्ष्मीधर ने पढ़माल्टाचिन्द्राकान में प्राकृत का तुलनात्मक अभ्यास
प्रस्तुत किया है। इसमें प्राकृत, पौर्णेनी, मायधी, पैल्नी, अप्रभंश द्वारा छह मायाओं पर विश्वसनीय विवेचन किया है, इसलिए इस प्रस्तुत का नाम पढ़माल्टाचिन्द्राकान है। इस व्याकरण की तुलना में मृत—
जीविकित की सिद्धांतकीय मुद्राओं के साथ करके सकते हैं। याने सिद्धांतकीय मुद्राओं का अध्ययन उदात्त—
उदात्त, गडडवहो, गहासपत्तस, कपूरमंजरी आदि प्रस्तुतियों से दिये गये हैं। लक्ष्मीधर ने लिखा है—

dुहे भौमिकोऽझुद्देहते व्यायिज्ञाल्ट्स्ते वे बुधाः।
पढ़माल्टाचिन्द्राकान तैस्ततवृ व्यायाम्य विलोक्यतः।

याने जो विक्रिय विधिक की गूढ़विरित को समझना और समझना चाहते हैं, वे उसकी व्याख्यान—
रूप पढ़माल्टाचिन्द्राका का देखें।

प्राकृत माया की जानकारी प्राप्त करने के लिए पढ़माल्टाचिन्द्राका अवधारणा है। इस
व्याकरण में धार्मिक मूल तथा धार्मिक मूल विस्तृत रूप से लिखे गये हैं। इसमें वेदी मूलक निर्देश भी
समावेश किया गया है।

लक्ष्मीधर का समय तिथिक विक्रिय के बाद का माना जाता है। क्योंकि पढ़माल्टाचिन्द्राका में
लक्ष्मीधर ने विधिक का उल्लेख किया है। तिथिक, लक्ष्मीधर और सिद्धान्त इस तीनों ने सूचना की
संकलना एक समान ही की है।

लक्ष्मीधर के प्रारम्भ के श्लोक से लगता है कि—उनकी टीका विधिक की वृत्ति पर आधारित
है, उस टीका पर कि यह टीका है ऐसा लगतात है।

इस मूल व्याकरणों के अभिलेख अनेक प्रकार माययान हैं, जिनकी मायमपली नीचे दी जा
रही है। विस्तार यह से इसका विस्तृत विवरण यहाँ नहीं दिया है।

(१०) प्राकृतमन्दचिवन—लक्ष्मीधर—इस व्याकरण में ३४ मूल है। इसमें प्राकृत के मूल नियमों
का विवेचन है।

(११) प्राकृतमाणाश्र—पुष्पोत्स; इस व्याकरण में अनेक भाषा-विमायीयों का वर्णन है।

(१२) प्राकृतमाणाश्र—अयर्विज्ञान्त; इसमें प्राकृत के सामी उपयोगी विधिक का विवेचन
अनुच्छेद है।

(१३) प्राकृतमाणाश्र—सुभाष्ट; इसमें ४१६ मूल है। वर्षमच के प्राकृतमाणाक्त के समान ही
यह व्याकरण है।

(१४) प्राकृतमाणाश्र—श्री रतनचन्द्र जी मो।

(१५) प्राकृतमाणाश्र—समानांदत्र।
५४ प्राकृत भाषा और साहित्य

(१६) प्राकृतबोध — नरचन्द्र।
(१७) प्राकृतचिन्तमणिका — कुणपंडित (केशकुमार)
(१८) प्राकृतचिन्तमणिका — वामनाचार्य।
(१९) प्राकृतचिन्तमणिका — चण्डवर शर्मा।
(२०) प्राकृतचिन्तमणि — रघुनाथ शर्मा।
(२१) प्राकृत साहित्यका — नरसिंह।
(२२) प्राकृतमणिका — चिन्तनोम्य मुपाल।
(२३) प्राकृतमणि — अपराजेयन।
(२४) प्राकृतचिन्तमणिका — दुरुष्णाचार्य।
(२५) प्राकृतचिन्तमणि — भासकर।
(२६) प्राकृतसारसूर्यालास — श्री नागोवा।
(२७) प्राकृतभाषाविज्ञान:...
(२८) प्राकृतमणि — नागोवा।
(२९) प्राकृतधार्मिकलग्न:...
(३०) प्राकृत—मार्गांश्रीका — जय बेकरदास जी।
(३१) अधिवृत्तचिन्तमणि — श्री श्रीतसर।
(३२) प्राकृतधार्मिकलग्न: — श्री भोज।